http://www.jainkosh.org

सहजानंद शास्त्रमाला

मनोहर-पद्यावली

भाग-2

रचयिता

अध्यात्मयोगी, न्यायतीर्थ, सिद्धान्तन्यायसाहित्यशास्त्री

पूज्य श्री क्षु० मनोहरजी वर्णी "सहजानन्द" महाराज

प्रकाशक

श्री सहजानंद शास्त्रमाला, मेरठ

एवं

श्री माणकचंद हीरालाल दिगम्बर जैन पारमार्थिक न्यास

गांधीनगर, इन्दौर

Online Version : 001

http://sahjanandvarnishastra.org/

मनोहर पद्यावलि द्वितीय भाग

(व्रत प्रतिमा लेने के बाद रचित भजनों का संग्रह)

(१२४) "बारह भावना"

दोहा—नमूं नमूं आनन्दघन, हे विराग विज्ञान।
वमूं वमूं भव पीर सब, करूं सुखामृत पान।।टेक।।

छन्द—हम सब चाहें जगके जीव, दुःख न हो सुख रहे सदीव।
सुखके अर्थ भरचौ श्रम भार, सुख नहिं पायो कबहु लगार।।१।।

अनित्य भावना

तन धन पुत्र मित्र परिवार, परिणति इनकी इनके लार।
मैं चाहूं मो माफिक रहें, सोचो फिर कैसे सुख लहें।।२।।

अशरण भावना

तन धन गृह सुत किंकर नार, इनसे सुख जीवन भ्रम धार।
इनको दास न बन सुन भ्रात, कर्म उदैं जीवन सुख सात।।३।।

संसार भावना

हो न कबहुं दुख वह सुख सार, इन्द्रिय भोग हैं प्रकट असार।
रंक राव सब तृष्णागार, सो असार सब विधि संसार।।४।।

एकत्व भावना

बन्धु मित्र जाने सुखकार, तेरो सुख तुझ माँहि अपार।
सो भूल्यो कीनो विधि बन्ध, तातैं विपदा को सम्बन्ध।।५।।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

अन्यत्व भावना

जो तू यह तन तज कर जाय, तेरो तन फिर नाहिं कहाय।
अब हूं इस तनसे तू भिन्न, तो न विराने होंय अभिन्न ॥६॥

अशुचि भावना

खून पीव मल मूत्र मलीन, ऐसे तन से का रति कीन।
तेरो तो शुचि ज्ञान शरीर, परम शान्ति अमृत रस सीर ॥७॥

आश्रव भावना

मन वच तनके चंचल होत, होत विचल यह आतम ज्योति।
सो ही विधि को आवन द्वार, ताते चंचलता निरवार ॥८॥

संवर भावना

कर्म रुकै कारज बन आय, ताको भाई एक उपाय।
शुद्ध निजातम परिणति देख, यही कोटि शास्त्रनि को लेख ॥९॥

निर्जरा भावना

जैसी रुके विषय की चाह, शान्त होय सब तृष्णा दाह।
पूर्वबद्ध विधि होय अबन्ध, हो अनंत सुखका सम्बन्ध ॥१०॥

लोक भावना

तीन लोकके सब ही थान, उपज्यो मरयो भयो दुख खान।
नाना विधि इन्द्रिय सुख लह्यो, तो भी टुक संतोष न गह्यो ॥११॥

बोधिदुर्लभ भावना

मिले मिलें सुरपति के भोग, कंचन कामिनि को संयोग।
विस्मय नहीं सुलभ सब जान, दुर्लभ है स्वातम सरधान ॥१२॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

धर्म भावना

नहीं राग नहिं द्वेष न मोह, न हो, विविध कल्पन संदोह ।
तत्त्वभासना केवल होय, सो ही धर्म सत्य सुख जोय ॥१३॥

दोहा

को मैं आयो किधर से, जाऊंगा किस ओर ।
चितवत चितवत एक दिन पा लूंगा शिव ठौर ॥१४॥
आतम प्रगट लखते सभी, विश्व प्रकट हू होय ।
पै निज आनंद लीनता हर न सके दुक कोय ॥१५॥
हे स्वतन्त्र विज्ञानमय वीतराग भगवान ।
बसो 'मनोहर' के हृदय गलै मोह की शान ॥१६॥

(१२५) आत्म-कीर्तन

हूं स्वतन्त्र निश्चल निष्काम । ज्ञाता द्रष्टा आतम राम ॥टेक॥

मैं वह हूं जो हैं भगवान, जो मैं हूं वह हैं भगवान ।
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यहँ रागवितान ॥१॥

मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान ।
किन्तु आशवश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान ॥२॥

सुख-दुख दाता कोइ न आन, मोह राग रुष दुख की खान ।
निजको निज परको पर जान, फिर दुखका नहिं लेश निदान ॥३॥

जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम, विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम ।
राग त्यागि पहुंचूं निजधाम, आकुलताका फिर क्या काम ॥४॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

होता स्वयं जगत परिणाम, मैं जगका करता क्या काम ।
दूर हटो परकृत परिणाम, "सहजानन्द" रहूं अभिराम ॥५॥

(१२६)

मत राग करो, मत द्वेष करो, यहँ कोई किसीका नहीं हुआ ।
ज्ञाता द्रष्टा तेरा स्वभाव यों आप भूल क्यों दुखी हुआ ॥टेक॥
जनमत ही तो ये काम क्रोध, माया मद लोभ न कहीं दिखा ।
ज्यों ज्यों बढ़ती गई तेरी आयु, किसके बहकाये भ्रमी हुआ ॥१॥
जिनको तू अपना कहता था, तुझको जो अपना कहते थे ।
वे रहे नहीं तू नहीं गया, फिर क्यों इनमें बेहोश हुआ ॥२॥
जो होता है वह होने दो, हे सहज न उनमें रागी हो ।
यह मायामय वैभव तेरा, नहिं है, होगा, न कभी हुआ ॥३॥

(१२७) "आरती" (प्राचीन चालमें)

ॐ जय जय अविकारी ॥टेक॥

काम क्रोध मद लोभ न माया, समरस सुखधारी ।
ध्यान तुम्हारा भव्य जनों के, सकल क्लेशहारी ॥१॥
हे स्वभावमय जिन तुमि चीना, भव संतति टारी ।
तुव भूलत भव भवमें भटकत, सहत विपति भारी ॥२॥
पर सम्बंध बंध दुख कारण, करत अहित भारी ।
हे निज ब्रह्म लीनता तेरी, चहुं गति दुखहारी ॥३॥
ज्ञानमूर्ति हे सत्य सनातन, मुनि मन सञ्चारी ।
निर्विकल्प ज्ञायक परमातम, शुचि गुणभंडारी ॥४॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

बसो बसो हे सहज ज्ञान घन, सहजशांतिचारी।
टलैं टलैं सब मोह उपद्रव, परबल बलधारी ॥५॥

(१२८)

मेरा पहचानहार दूसरा न कोई रे।
ज्ञाता की दृष्टि भली बुरी नहि होय रे ॥टेक॥

मूरत ही मूरत को देख देख रीस जात,
मूरत ही मूरत को देख देख रीझ जात।
अविनाशी ज्ञान रूप देखे न कोई रे,
ज्ञाता की दृष्टि भली बुरी नहिं होय रे। मेरा० ॥१॥

हाड़ मांस लोथड़ का आदर अपमान यहां,
देखते न आत्मतत्त्व ज्ञानरूप अलख यहां।
जिसे कोई मानता ये खाक यहीं होय रे,
ज्ञाता की दृष्टि भली बुरी नहिं होय रे। मेरा० ॥२॥

विपदा का नाम कहाँ जग के परिणाम यहां,
परिणमें वे अपने में तेरी क्या हानि कहाँ।
झूठ मूठ सोच मूर्ख दुखिया ही होय रे,
ज्ञाता की दृष्टि भली बुरी नहिं होय रे। मेरा० ॥३॥

सहजानन्द सहज ज्ञान, इसका नहीं यहां मान,
माया की माया से हो रही पहचान ठान।
किस ही का मैं न कोइ मेरा न कोई रे,
ज्ञाता की दृष्टि भली बुरी नहिं होय रे। मेरा० ॥४॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

(१२९) "आरती" (वर्तमान चाल)

ॐ जय जय अविकारी ।
जय जय अविकारी, ॐ, जय जय अविकारी ।
हितकारी भयहारी, शाश्वत स्वविहारी ।
ॐ जय जय अविकारी ॥टेक॥
काम क्रोध मद लोभ न माया, समरससुखधारी ।
ध्यान तुम्हारा पावन, सकल क्लेशहारी ॥ॐ...॥१॥
हे स्वभावमय जिन तुमि चीना, भव संतति टारी ।
तुव भूलत भव भटकत, सहत विपत भारी ॥ॐ...॥२॥
परसम्बंध बंध दुख कारण, करत अहित भारी ।
परमब्रह्मका दर्शन, चहुंगति दुखहारी ॥ॐ...॥३॥
ज्ञानमूर्ति हे सत्य सनातन, मुनिमन संचारी ।
निर्विकल्प शिवनायक, शुचिगुणभंडारी ॥ॐ...॥४॥
बसो बसो हे सहजज्ञानघन, सहजशान्तिचारी ।
टलें टलें सब पातक, परबल बलधारी ॥ॐ...॥५॥

(१३०)

मैं ध्यान लगाऊं कहां, कुछ भी न सार यहां ।
मायामयी सारा जहां । मैं ध्यान लगाऊं कहां ॥टेक॥
ओ ज्ञानवाले खुदको भुलाके, सुख पाना मुश्किल मनको लुभाके ।
राग बुरी गतिकी निशां ॥ मैं ध्यान० ॥१॥

http://sahjanandvarnishastra.org/

खुद ही तो मैं हूं आनंदका घर, बस जाऊँ खुदमें फिर है कहां डर।
स्वाश्रित सुखमय हूं यहां ॥ मैं ध्यान० ॥२॥
नित्य निरंजन, शुद्ध सनातन, ज्ञानसुधामय खुद ही मैं पावन।
शान्त सदा शिवमय यहां। मैं ध्यान० ॥३॥
सब द्रव्योंमें सबसे आला, सबका ज्ञाता सबसे निराला।
स्वात्म भजे होगी रिहां। मैं ध्यान० ॥४॥
सहजानंद स्वरस शुचि पी के, अथिर विषय क्यों लागे नीके।
दर्द निदां सारा जहां। मैं ध्यान० ॥५॥

(१३१)

मेरी दृष्टि में नाथ बिराजा, मेरे सिद्ध हुए सब काजा,
सारी बाधायें गई, शुद्ध परिणतियां भई। मेरी० ॥टेक॥

तू न था दृष्टिमें सो भ्रमा लोकमें, जड़से नेहा लगा रच रहा शोकमें।
जब से आया तू नजर, भागे सारे ही फिकर।
मेरे ज्ञानमें तू ही समा जा। मेरे०, सारी०, शुद्ध०, मेरी दृष्टि० ॥१॥

क्रोध मद लोभ छल रंच मुझमें नहीं, शुद्ध ही वर्तता सर्वदा तू यहीं।
नहिं देखेसे मिले, ज्ञानदृष्टिसे मिले। जगका तारनहार जहाजा।
मेरे० सारी०। शुद्ध० मेरी दृष्टि० ॥२॥

रूप रस गंध त्वक से परे अज अमर, शुद्ध ज्ञायकस्वरूप
चेतनाप्रकाशभर। जिसके दर्शनसे सदा, संकट आते न कदा।
मेरा सहजानंद विराजा। शुद्ध० मेरे० सारी०। मेरी० ॥३॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

(१३२)

गुंजा विश्व था वीर देवकी, दिव्यध्वनिकी धारों से ।
ज्ञानमार्ग संचार हुआ था, संतों के अवतारों से ।
किन्तु आज कहना है खुदसे व सहधर्मी प्यारों से ।
आत्महितैषी पक्षरहित अविचारों से सविचारों से ।

× × ×

चिदानन्दमय अपने प्रभुको, भूल गया कुविचारोंसे ।
अपने आपकी भूलमें तड़फा, कष्टों की भरमारों से ।।टेक।।
ज्ञान और आनन्द शक्ति का, पुंज स्वयं ऐश्वर्य यहाँ ।
देह विभव जड़ इष्ट मान कर, भूला भटका यहाँ वहाँ ।।
अपने ही अपने स्वरूपमें, परिणमते सब द्रव्य यहाँ ।
फिर बतलावो कौन किसीका, कर सकता है कार्य यहाँ ।।
दूर हटो अब मिथ्या जालों मिथ्याचार विचारोंसे ।
अपने आपकी भूल में० । चिदा०, अपने आप० ।।१।।
ज्ञान और आनन्दभावका, अपना अनुभव करते हैं ।
हुआ ज्ञान आनन्द अन्यसे, मान भटकते फिरते हैं ।।
नहीं ज्ञान आनन्द अन्यमें, मेरा फिर कैसे आये,
लेश ज्ञान आनन्द न जड़में, उनसे फिर कैसे आये ।
कह दो सच्ची बात कुटुमसे, सारे पहरेदारोंसे,
अपने० । चिदानन्द०, अपने आपकी० ।।२।।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

अपना ही उत्पाद करें सब, अपना ही व्यय करते हैं,
अपनी ही सब पर्यायों में, खुद ही खुद ही रहते हैं।
रंच किसी का गुण या पर्यय, नहीं अन्यमें जा पाता,
कोई मुझको कैसे सुख दुख या मैं परको दे पाता।
ज्ञानामृत अब पियो न झुलसो, विभ्रमके अंगारों से,
अपने आपकी०। चिदानन्द०, अपने आपकी० ॥३॥

बाह्य विषय नहिं सुख दुख देते, इनका सत्त्व निराला है,
द्रव्यकर्म भी मुझसे बाहर, अपनी परिणति वाला है।
परका आश्रय करके खुदको, कर्म उदयमें डाला है,
विषय कषायों रूप वर्तकर, किया स्वयंको काला है।
बचो लोभ छल क्रोध कपट, निजके विभाव गद्दारों से,
अपने आपकी०। चिदानन्द०, अपने आपकी० ॥४॥

छोड़ो परका गीत राग अब, अपने प्रभुके गुण गावो,
शुद्ध सनातन नित्य निरञ्जन, ज्ञानज्योति मनमें भावो।
रहता सदा समीप स्वयं इसके आश्रयसे हित पावो,
सहजानन्द परम ज्योतिर्मय, सार परम पदमें आवो।
सदामुक्त परमेश्वर पेखो भक्तों के इन द्वारों से,
अपने०। चिदानन्द०, अपने० आपकी० ॥५॥

(१३३)

भैया मेरे नरभव विषयोंमें न गमाना।
भैया मेरे अपनो स्वरूप न भुलाना ॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

देखो निज दृष्टी निभाना-निभाना ।। भैया० ।।टेक।।

ये मन ये विज्ञान निराला, सब गतियोंमें सबसे आला ।
मुक्तीके मंदिरके द्वारों—का यह खोले बन्धन ताला ।।
अपनेमें आपहि सुहाना-सुहाना । भैया० ।।१।।

निज परिचय विन जगमें डोले, अब स्वरूप रच अघमल धो ले ।
सबके ज्ञाता सबसे न्यारे, निज ज्ञायकतामें रत हो ले ।।
जानो ये सारा – विराना विराना । भैया० ।।२।।

जब लग रोग मरण नहिं आये, शान्ति सुधारस पीता जाये ।
सहजानन्द स्वरूप न भूलो, सारा अवसर वीता जाये ।।
शिवपथमें कदम बढ़ाना-बढ़ाना । भैया० ।।३।।

(१३४)

अहो सत्सङ्ग गुरुवाणी, सहज मुद्रा प्रभूदर्शन ।
सहज शिवमार्ग दरशाते, शरण है स्वात्म अवलम्बन ।।टेक।।

ये नव तत्त्वोंमें रहता भी, न अपनी एकता त्यागे ।
सकल परभावसे ये भिन्न, जगमग ज्योतिसे जागे ।।
ये शाश्वत पूर्ण प्रभु भी पूर्ण, पूर्णसे पूर्ण निष्पादन ।
पूर्ण कैवल्यपरिणतिका, पूर्ण निजब्रह्म ही साधन ।।अहो०।।१।।

साधु, पाठक, मुनीश्वर, जिन, सिद्ध हैं आत्मसंदर्शन ।
सहज हो शुद्ध प्रभु पदका, अभेदस्मरण अभिवन्दन ।।
स्वयं कर्ता स्वयं कारण, स्वयं कर्म हि स्वयं फल है ।
इसी निश्चयसे साधकका, ध्यान होता समोत्तम है । अहो०।।२।।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

अहो सर्वत्र दिखती आतम-प्रभु की ज्योति व कलायें।
इन्हींके द्वार इनके पार, सहज निज ब्रह्मको पायें ॥
निरंजन शुद्ध ज्ञायक देव-का हो नित्य उद्यापन।
निरंतर हो सहजआनन्द, अमृतका ही उद्भावन। अहो॥३॥

(१३५)

परमात्मा व आतम में कुछ भेद नहीं है।
आतमस्वभाव में भि नेह खेद नहीं है ॥टेक॥
इक जान आतमब्रह्म को, इसमें ही सार है।
संसार तो अपार रार, सब असार है ॥
निजतोषमें संतोष जो भि ज्ञानी करेगा।
परमात्मतत्त्वका विराट्, रूप लखेगा। परमा० ॥१॥
कठिनाइ कुछ नहीं है ज्ञानकी है जरूरत।
सत्यार्थ ज्ञान होते ही सारी हैं सहूलत ॥
जैसा ही यम नियम समाधि, होने को होगा।
हो जायगा वो अपने आप, फर्क न होगा ॥परमा०॥२॥
देखो तो अपने आपमें, ब्रह्मत्व बसा है।
परदृष्टिसे ये लोकमें, सर्वत्र फसा है ॥
परसे पृथक् हो आपमें, जब मग्न ये होगा।
तब सहज स्वयं शान्त ही, परमातमा होगा। पर०॥३॥

(१३६)

जिनके उपयोगमें स्वयं नहीं, उनने कुछ ज्ञान किया न किया।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

जिनको निजका सरधान नहीं, प्रभुका सरधान किया न किया ।।टेक
परसे विभक्त निजमें समस्त, निज तत्त्वका लक्ष्य कभी न किया ।
उनने घर अंबर परिजन धन, आदिक सब त्याग किया न किया ।।१।।
अविकार अमल शुचि चित्स्वभावमें, जिसने ध्यान कभी न दिया ।
तप संयम व्रत जप भजन गान, अनशन वनवास किया न किया।।२।।
निज सहजानन्द सुधारस जिनने, अनुभव कण्ठ कभी न पिया ।
तिन कोटिक दान दिया न दिया, तिन तीरथलाभ लिया न लिया।।३

(१३७)

अय विलय नित्य मय सकल वस्तुके, बोधका मर्म यही पाया ।
सब परिणमते खुद्द खुदमें ही, नहिं परसे कुछ मुझमें आया ।।टेक।।
जो जो है वह वह ही है सदा, उसकी परिणतियाँ नाना हैं ।
परिणतियां क्षण क्षण मिटती तू, क्यों उनमें बना दिवाना है ।।१।
मौलिक स्वरूप गर सकल वस्तुका, जान लिया तो ज्ञानी है ।
गर दृश्यमान ही सब कुछ हैं, यों माना तो अज्ञानी है ।।२।।
पर परिणतियोंको देख राग रुष, मोह करे वह दोषी है ।
मैं चित्प्रकाश हूं, चिद्विलास हूं, यों निरखे निर्दोषी है ।।३।।
जो देहबोधवित्रि पिण्डरूप, जगसे रखते यशकी आशा ।
वे प्रभुतानाश तो करते ही, करते कुयोनियोंमें वासा ।।४।।
अब सहज ज्ञान दर्शनमय अपना, सहजानन्द स्वरूप लखो ।
परसे विविक्त हो निजमें रत, हो शाश्वत निज आनन्द चखो ।।५

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

(१३८)

न आवे किसी जीवपर रोष, लखो सर्वत्र ब्रह्म निर्दोष ॥टेक॥
जिसकी होती जो कुछ करनी, सब उपाधिवश होती भरनी।
गह तू तत्त्व दृष्टि की तरनी, पा अविचल सन्तोष। न०॥१॥
परकी चेष्टा परतक रहती, तुम तक तो वह नहीं पहुंचती।
कर विकल्प क्यों व्यर्थ दुखी हो, पा अपना कुछ होश न०॥२॥
सहजानन्द स्वरूप तिहारो, अब अपना हितपंथ सम्हारो।
ज्ञानस्वरूप ज्ञानमें धारो, भजो बनो निर्दोष ।न०॥३॥

(१३९)

मुझे न है परका पतयारा, मुक्ती का प्रोग्राम हमारा ॥टेक॥
मैं खुद में खुदका करतारा, परसे नहिं मेरा निस्तारा।
था, है, होगा कोइ न हमारा, मुझको केवल मैं ही सहारा ॥१॥
होऊं जब निज देखनहारा, हो तब ज्ञानानन्दप्रसारा।
संकटका नहिं लेश गुजारा, अब निजपदका होश सम्हारा ॥२॥
भ्रमका भागा सब अंधयारा, मुझमें मुझका है उजयारा।
सहजानन्द स्वरूप हमारा, खुद ही जिसका राखनहारा ॥३॥

(१४०)

मेरा परम शरण प्रभु निर्विकार, जो सहज शुद्ध चिच्चमत्कार ॥टेक
प्रभु सुध भूलि अमित दुख पाया, अहित विषयवन अनिल सताया
मैंने अब तो लखा, निज लखनहार। मेरा० जो०। मेरा०॥१॥
सहज शुद्ध इस चित्प्रकाशमें, वास किया जिस चिद्विलासमें।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

उसने हि लही, महिमा अपार। मेरा०, जो०। मेरा०॥२॥
सहजानन्दतृप्त निज ज्ञानी, योगीका सर्वस्व निधानी।
मेरे हृदय बसो आनन्दकार। मेरा० जो०। मेरा० ॥३॥

१४१

मेरा तो इक चित्स्वभाव, दूसरा न कोई ॥टेक॥
धन घर परिजन निधान, सुहृद देह प्रकट आन।
राग बोध भी न मेरे, अन्य क्या हो कोई ॥मेरा तो०॥१॥
शाश्वत अविकार सार, निरवधि जिसका प्रसार।
योगियों ने एक मात्र जो स्वरूप जोई ॥मेरा तो०॥२॥
सहजानन्दैकरूप, ज्ञाता षट्द्रव्य भूप।
जिस आश्रय सकल सिद्धि, मेरा नाथ सोई॥ मेरा तो०॥३॥

(१४२)

तू क्या ललचै माया न, किसी की रही।
यहँ तू ही मिट लेगा यह तो, वही की वही ॥टेक॥
कभी तो सम्राट होकर, पाई विपुल मही।
अब थोड़ेसे टुकड़ों में क्यों, दृष्टि लग रही ॥१॥
कभी भी जड़ सम्पदासे, तृप्ति न लही।
जड़से पा लेगा क्या अब, सोच तो सही ॥२॥
चक्री नारायण के भी, जु साथ न रही।
नश्वर दुखकारिणी की, टेक क्यों गही ॥३॥
मायावी प्राणियोंने, कीर्ति कुछ कही।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

तेरी प्रभुताका उनको, भान भी नहीं ॥४॥
सहजानन्दस्वरूपी, सार तो यही ।
दर दर तू भटके क्यों अब, जान ले सही ॥५॥

नरभवमें आ करके किया क्या बता ।
भोगोंमें रम करके, लिया क्या बता ॥टेक॥
सिन्धूके दो तटसे सेल जूं बहे ।
बह करके कहीं सेल जुएँ में जुड़े ।
यों ही कठिन नरभव पाना कुछ पता ॥ नरभवमें ॥१॥
उत्तम कुल देश संगति बुद्धि तन वचन ।
इनका क्यों लाभ खोता कुछ तो कर मनन ।
पशुओं की जिन्दगी सी जिन्दगी धता ॥ नरभवमें ॥२॥
सारे कर्मोंका बन्धन यहीं से नशे ।
सुरपति भी नरभवके लिए तरसे ।
सहजानन्दी प्रभुको रहा क्यों सता ॥ नरभवमें ॥३॥

(१४४)

जय जय एकत्व दृष्टि । करती जो शुद्ध सृष्टि ॥टेक॥
परिणति स्वातन्त्र्य अतः, स्वयं कर्तृ कर्मरूप,
साधक आश्रेय यही, करण सम्प्रदानरूप ।
ऐसी अद्वैतदृष्टि, करती आनन्द सृष्टि ॥ जय० ॥१॥
नरभव निज परिणतिमें, नित्य अपादानरूप ।
निजगुण पर्यायोंका अभिन्न आधार रूप ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

यों अभिन्न अनुभवसे, होती सहजात्म दृष्टि ॥जय०॥२॥
सहजज्ञान सहज दृष्टि, सहजानन्दस्वरूप ।
सहजशक्तिमय विशुद्ध, एकरूप त्रिजगभूष ।
शिवसाधन भवनाशन निजकी यह सहजदृष्टि ॥जय०॥३॥

(१४५)

देखो देखो निजमें क्या रचना भरी ।
जिस रचनाके लखनहार योगी तृप्त हैं वसु पहरी ॥टेक॥
दर्शन ज्ञान आदि गुण जिनकी महिमा बहुत बड़ी ।
चिद्विलासमें तीन लोक की, रचना सकल जड़ी ॥देखो०॥१॥
गुणमें गुणका है प्रकाश कैसी यह ज्योति मढ़ी ।
जिसमें नहिं परका प्रवेश कैसी यह सुदृढ़ गढ़ी ॥ देखो० ॥२॥
सहज स्वसंचेतनमें लगती, सहजानन्द झड़ी ।
निष्कलङ्क इस निज अनुभवसे, कटती कर्म लड़ी ॥देखो०॥३॥

(१४६)

शिवसाधक संकट हारक, प्रभु तेरा मर्म पिछाना ।
विधि विभाव विग्रहसे सूना, सहजसिद्ध भगवाना ॥
शिवसाधक संकटहारक, प्रभु तेरा मर्म पिछाना ।
जय हो, जय हो, जय हो, जय जय जय जय हो
सहजसिद्ध भगवाना ॥टेक॥
राग द्वेष पुद्गल उपाधिकी, छाया माया जाना ।
नानामें भी एकरूप नहिं, हुआ न होगा नाना ॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

शिवसाधक संकटहारक, प्रभु तेरा मर्म पिछाना ।
जय हो, जय हो, जय हो, जय जय जय जय हो
सहजसिद्ध भगवाना ॥१॥

निर्विकल्पसा है विकल्प, नहिं, कुछ विकल्प है आना ।
निर्विकार है गुणविकार जो, गुणमें रहा समाना ॥
शिवसाधक० । जय हो० ॥२॥

ज्ञानप्रसार असीम सहजका, चमत्कार सब जाना ।
उमगो सहजानन्द जहाँ जहँ, वह आधार पिछाना ।
शिवसाधक० । जय हो० ॥३॥

(१४७)

कर अब सहज तत्त्वसे प्रेम । स्वपर सकल जीवोंमें
जो सम, तिस आश्रय ही क्षेम ॥ कर अब० ॥टेक॥

सहज तत्त्व ज्ञायकस्वभाव से, विमुख जगतका जीव ।
दर दर भटकत धरत विविध तन, सहत विपत्ति अतीव ॥
कर मत मायारूपसे प्रेम । कर० । स्वपर० ॥१॥

स्वतःसिद्ध परमार्थ निरञ्जन, ध्रुव चैतन्यप्रकाश ।
अचल सरल मृदु शान्त सनातन, जिसका अतुल विकास ॥
नित्य निर्मल निजमें ज्यौं हेम । कर० स्वपर० ॥२॥

सहज ज्ञानका सहज ज्ञानसे, सहजहि जाननहार ।
सहजानन्द सुधारस पीता, हो शाश्वत अविकार ॥
कर अब यों ही अन्तर्नेम । कर० । स्वपर० ॥३॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

(१४८)

अब हमारा मार्ग होगा, सारे जगसे हो निराला।
क्योंकि मेरी धुनि लगी है, इसमें जो है सबसे आला ॥टेक॥

मुझको संगम मुझको चक चक, नहिं सुहाती इक घरी है।
क्या है भरना क्या है करना, मुझपै जाविर विधि अरी है ॥१

भूला भटका अब लों भ्रमवश, होना था सो हो लिया अब।
अब समझ आई है हमने, मंत्र हितका पा लिया सब ॥२॥

परको अपना माना था बस, इसमें ही सब जाल छाया।
निजको निजके मानते ही, छूटने लगती है माया ॥३॥

बात थी कितनी सी जड़में, हो गया कितना बतंगड़।
बात भी कितनी सी करनी, दूर होगा सब भदंगड़ ॥४॥

अब तो सहजानन्द ज्ञायक, चिन्तवन का ही समय है।
चित् प्रभुकी साधनासे, फिर तो यह चेतन अभय है ॥५॥

(१४९)

विधिफल की बातें सुन सुन कर, हे भक्त पथिक क्यों घबड़ाता।
विधिफल पाने नहिं पानेकी, तुझमें है कला क्यों नहिं लखता ॥टेक॥

वैभव यश राज्य स्वजन इत्यादि, विविध शुभ विधिफल आँय घनें।
जो उनको कुछ अपनाये नहीं, क्यों फल पानेकी बात बने ॥
ज्ञानी बन साहस कर अनुपम, निज निधिका फल क्यों नहिं चखता। विधिफल पाने० ॥१॥

दारिद्रय व्याधि अपयस अनेक, उपसर्ग अशुभ फल आँय घनें।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

पर जान विकल्प न आये गर, क्या फल पाने की बात बने ॥
ज्ञानी बन साहस कर० । विधिफल० ॥२॥

मैं केवल निज चेतनाभावका, कर्ता, भोक्ता अधिकारी ।
इस श्रद्धामृतके पानसे होता, ज्ञानी निर्भय अविकारी ॥
ज्ञानी बन साहस कर० । विधिफल०॥३॥

मुख मोड़ नहीं उस ओर जहाँ, संयोग वियोग निदान बसे ।
मुख मोड़ स्वरूपकी ओर जहाँ, स्वाधीन सहज आनन्द बसे ॥
ज्ञानी बन साहस कर० । विधिफल ॥४॥

गर अपना आप संभाल लिया, विधिका वश वहाँ नहीं चलता ।
गर मोह मूलको तोड़ दिया विधि कुसुम मिटैं ज्यौं नहिं फलता ।
ज्ञानी बन साहस कर० । विधिफल०॥५॥

(१५०)

तुम बिन मेरा कौन शरण है परम ब्रह्म अविकारी परम ब्रह्म अविकारी ॥टेक॥

तुमको भूल जगतमें भटका, मिथ्या पाप विकारों से ।
तेरी सुधमें शिवपथ पाया, तत्त्वज्ञान विचारों से ॥
अब मत मुझसे ओझल होना, हे जगसंकट हारी । परम०॥१

तीन लोक तिहुं काल समाया, तेरी सीधी लीला में ।
तन विभाव विपदायें छाई, तेरी उल्टी लीला में ।
हो ली बहुत बचा लो अब तो, कर प्रयोग प्रभुताई । परम०॥२
ज्यौं सर्वत्र मधुर मिश्रीसे व्यक्त होत है मधुराई ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

सहजानन्द पूर्ण प्रभुसे त्यौं, शान्ती सरत है शिवदाई
रहे रहे शाश्वत तुव अनुभव, हे अनन्त गुणधारी । परम०

(१५१)

चिद्रूप हमारा, इसका हि सहारा ।
परभावके प्रसंगमें नहिं मेरा गुजारा चिद्रूप० ॥टेक॥
वस्तुस्वरूपमें नहीं कि, परसे कुछ मिले ।
खुद गर्ज भी किसको कहें, सब सत्त्वके भले ।
स्पष्ट है क्या कष्ट है, विकल्प हि क्यों चले
नहिं हम किसीके कोई नहीं कुछ भि हमारा । चिद्रूप०॥१
इक क्षेत्रमें अवगाहि होके, तन अमित मिले ।
वे भी रहे न साथ जो, इतने घुले मिले ।
जड़ वैभवोंकी बात क्या, पर प्रकट ये डले ।
रागादि भी न रह सका, बन करके हमारा । चिद्रूप०॥२॥
सहजसिद्ध सहज ज्ञान, सहज दर्शमय ।
सहजानन्द स्वरूप, सहज शक्ति मय ।
सहज चिद्विलासका जिसमें है सहज लय ।
मेरा सहज स्वरूप अमित गुणका पिटारा । चिद्रूप०॥३॥

(१५२)

किस ही का राग छोड़कर, किस ही में कर लिया ।
टारा वटोहि ना गई, फिर धर्म क्या किया ॥टेक॥
गृह ग्राम मित्र संपदा परिजनको त्यागकर ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

जनता प्रसन्नताके लिए कस ली गर कमर।
कुछ छोड़के बहुतोंका मोह, उर बसा लिया। टारा० ॥१॥

धनसंचयार्थ बुद्धिकी, चतुराई थी कभी
अब नाम ख्यातिके लिये विज्ञान है सभी
टुक लालसाको त्यागके, लालच बढ़ा लिया ॥२॥

व्रत संयमादि भी किए कर पुण्यकी आशा।
पद नाम लाभ अर्चनार्थ अब वही नासा।
सुध भूल सहज तत्त्वकी, सब व्यर्थ जो किया ॥३॥

(१५३)

सद्बुद्धि दो हे नाथ, छेड़ू न तेरा साथ, मुझको न चाह
और कुछ, चरणोंमें रहे माथ ॥सद्बुद्धि० ॥टेक॥

किस ही प्रकारका विकार, मुझको न शरण
अब तक किये विकारमें, नाना जनम मरण।
उन संकटोंमें कोई कभी, दे न सका हाथ ॥सद्बुद्धि० ॥१॥

अविकार प्रभुस्वरूप की, रुचि ही मुझे शरण।
सेऊं विशुद्ध तेरे ज्ञान, दर्शके चरण।
भूलूं न सहज ज्ञानका, आनन्द कभी नाथ ॥सद्बुद्धि० ॥२॥

जग संपदा की अणूमात्र, भी न मुझे चाह।
इच्छा यही पूरण करूं मैं, मुक्तिकी ही राह
तेरे समीप भावमार्ग—में चलूं हे नाथ ॥ सद्बुद्धि०॥३॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

(१५४)

सहज अपना उपयोग सम्हार ।
मोह क्रोध मद लोभ कपट वश, अब तक किया बिगार ।।टेक०।।
जिनका आश्रय करके होते, ये मोहादि विभाव ।
प्रकट भिन्न वे ख़ुदके गर्जी, ख़ूब सम्हारें दाब ।
न बन बेहोश न कर ममकार । सहज० ।।१।।
परम ब्रह्म चैतन्य स्वरूपी, निज निजके करतार ।
सबसे तेरा तुझसे सबका, नहिं सम्बन्ध लगार ।
तुम्हारा तुम ही तक अधिकार ।।सहज०।।२।।
सहजानन्द ज्ञानघन प्रभुका, पाकर शुद्ध प्रकाश ।
मोह कषाय विषय संकट का, अब समूल कर नाश ।
तुम्हारे तुम ही राखन हार ।।सहज०।।३।।

(१५५)

दीन है वह जो विषयाधीन ।
विषयविरत अन्तर्ज्ञानी तो, परम समृद्ध प्रवीन ।।दीन०।।टेक।।
विषयभाव विषयोंके साधन, नश्वर भिन्न असार ।
क्लेशरूप दुखहेतु इन्हींसे, भटके यह संसार ।
धन्य जिन आशा की है छीन ।।दीन है० ।।१।।
शिवसम्पन्न निराकुल निरुपम, सहज सुगम स्वाधीन ।
निजको तजकर विषम विषयमें, धरत नवीन नवीन ।
मूढ वे होते शान्तिविहीन । दीन है० ।।२।।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सहजानन्द ज्ञानघन आतम, अविनश्वर निजसार।
इस ही के दर्शन आश्रय से, होती शान्ति अपार।
इसी में रहते योगी लीन ॥दीन०॥ विषय०। दीन० ॥३॥

(१५६)

मेरे मन सहज स्वरूप समायो।
सहज अनन्त ज्ञान दर्शन सुख, शक्ति स्वरूप सुहायो ॥टेक॥
निज निधि विसर पसर विषयनमें, व्यर्थ जगत भरमायो।
परमैश्वर्यं समृद्ध स्वयं अब, आपहिं आप लखायो ॥१॥
जास आस शिवपास हेतु है, जो ऋषियोंने ध्यायो।
सरल निरापद ज्ञाता द्रष्टा, केवल निज पद भायो ॥२॥
अलख निरञ्जन सहज ज्ञानघन सहजानन्द बसायो।
कमी यहाँ कुछ रंच नहीं अब, पूर्ण सदा शिव पायो ॥३॥

(१५७)

प्रियतम अपनी सुध मत भूल।
हूं चैतन्यप्रकाश निरापद, निजको करो कबूल ॥टेक॥
अन्य विषयके सकल संग जो, तुझको जंचते फूल।
तुझको भव भव पीड़ित करते, ये ही हैं सब शूल ॥१॥
दृढ़ निश्चय कर जिन गह लीना, अपना आतम मूल।
विषम भवोदधि तिरकर पहुंचे, भवके उत्तर कूल ॥२॥
निराधार करता विकल्प क्यों, थोते ऊल जलूल।
सहजानन्द ज्ञान अनुभवके, पालनमें नित भूल ॥३॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

(१५८)

निजकी महिमा लो अब जानी।
अब तक वृथा बुद्धि अकुलानी। निज०॥ टेक॥
मूल प्रकाश पाय बिन जगमें, दर दर बाह्यदृष्टि भरमानी।
मूल प्रकाश दृष्ट होते ही, जंचा स्वयं सबमें लासानी॥१॥
लोक अलोक बिन्दुवत् भासे, ऐसा ज्ञान गमन असमानी।
अमित सहज आनन्द सघन हो, व्यापा निश्चल ब्रह्मप्रमानी॥२॥
शुद्ध अमूर्त परम ज्योतिर्मय, शिवस्वरूप सबमें अगवानी।
पूर्ण पूर्ण से पूर्ण निकलकर, रहे पूर्ण ही शाश्वत ज्ञानी॥३॥

(१५९)

मेरे तो प्रभु गगन बिहारी।
निश्चय सतत स्वरूप बिहारी॥ मेरे०॥ टेक॥
दर्शन सबको होय चतुर्दिश, चतुरानन सबके हितकारी।
मनुज सुरासुर पशुपक्षी गण, जिनपद सेय पाप संहारी॥१॥
सहज निरीह सर्व भाषामय, जिनकी दिव्य ध्वनि सुखकारी।
शिवविधिधाता सबके त्राता, ज्ञाता द्रष्टा कर्ममुरारी॥२॥
चरणकमल तल स्वर्णकमल जिनि, रचते शचिपति प्रभु अविकारी
सहजानन्द सकल गुण आगर, सर्व चराचर ज्ञान मंझारी॥३॥

(१६०)

आपहि अपना किया नाश, मैंने आपहि अपना किया नाश।
मेरो सहज स्वरूप तो चित्प्रकाश। मैंने०॥टेक॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

प्रकट असार भिन्न तन वैभव, रूप गंध रस परस शब्दरव ।
भ्रमवश इनकी करी आश ।। मैंने ।। टेक ।।
नरक निगोद कीट पशु पक्षी, भू जल अग्नि पवन तरु मक्षी ।
विविध कुभव धर दिया त्रास ।।मैंने०।।२।।
परकी जिस विधि लगन करी अति,
यदि की होती लगन आत्म प्रति ।
करता सहजानन्दवास ।। मैंने० ।।३।।

(१६१)

पाया शिवपथका प्रकाश । मैंने पाया शिवपथका प्रकाश ।
जहँ सहज रहत शिव चिद्विलास ।। मैंने० ।। टेक
देखा सहजभाव निज शाश्वत, पर संन्यास किया स्वस्थिति हित ।
अब आपमें अपना रहत वास । मैंने० ।।जहँ० मैंने०।।१।।
ज्ञानलीनता जब नहिं रहती, ध्यान लीनता रहती महती ।
तपका तो रहतहि हित लिवास ।।मैंने०।। जहँ ।।मैंने०।।२।।
संयम अनशन आदि तपोंमें, सहजानन्द झरत आतममें ।
सब विधि विभावका नशत त्रास । मैंने० जहँ० । मैंने०३ ।।

(१६२)

टुक रुक जावो, यह मैं आया, लेने शरण तिहारी,
हे सहजानन्द बिहारी ।।टुक०।।टेक।।
जबसे दृष्टिमें आये प्रभुवर, शान्ति मिलत निर्भेद हो मिलकर ।
टुक अन्तर रहता मिलापमें, करत विकार लुटाई, हे सह टुक० १।।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

शान्त कान्त निजअनुभव पथसे, गुप्त लुप्त हो थिर अविचलसे।
आते आते न जाने प्रभु, करता कौन ठुकाई।
हे सहजा०॥ टुक०॥२॥
इस उपयोगमें ध्यान तुम्हारा, लोटे चाहे दुःखप्रकारा।
मेरी लगन लगी तुम ही सों, मेरे सहज सहाई। हे० ॥टुक०॥३

(१६३)

धन्य धन्य जय, जय जय जय हे, चित्स्वरूप दृग्धारी,
हो अनुपम निधि भंडारी ॥ धन्य० ॥ टेक ॥
दिव्य भोग सुख भोग रहे हो फिर भी परिणति न्यारी।
सहज सिद्ध सच्चिदानन्द की सतत रहत सुध सारी।
हो अनुपम निधि भंडारी ॥ धन्य० ॥१॥
अशुभ नरकगतिके विपाकवश, अशुभ विक्रिया धारी।
मारत मरत सहत अति वेदन फिर भी आत्मविहारी।
हो अनुपम निधि भण्डारी ॥धन्य०॥२॥
तिर्यग्गति के संज्ञी हुंडक अटपट तनके धारी।
बाहरकी सुध भूल स्वयं में आतम ज्योति सम्हारी।
हो अनुपम निधि भंडारी ॥ धन्य० ॥३॥
चरित मोहवश बने असंयत सहजविरति मगचारी।
चलत उठत बैठत सोवत पर, ज्ञान क्रिया ही जारी।
हो अनुपम निधि भंडारी ॥ धन्य० ॥४॥
संयम पथसे चढ़ समाधिमें, निर्विकल्प अविकारी।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सहजानन्द सुधारस पीकर हुए अमर हितकारी ।
हो, अनुपम निधि भण्डारी, ॥ धन्य० ॥५॥

(१६४)

हे ज्ञानानन्द निधान सहज भगवान कषाय न लाऊँ,
विषयोंमें नहीं लुभाऊं ॥टेक॥

हू शाश्वत ज्ञानानन्दरूप, भ्रमसे फिरता धरता कुरूप ।
नहिं बाहर तिल तुषमात्र सार क्यों जाऊं ।
विषयोंमें नहीं लुभाऊं । हे ज्ञाना० ॥१॥
हूं खुदका खुद ही शरण सार, भ्रमसे अपनाता बाह्य भार ।
चर अचर अन्य नहिं मेरा, क्यों ललचाऊं । विष० । हे०॥२॥
खुद खुदका कर्ता भोक्ता हूं, नहिं परका कर्ता भोक्ता हूं ।
वस्तुत्व दुर्ग दृढ़ सहज, नहीं भरमाऊं । विषयों० । हे०॥३॥

(१६५)

भव वनमें भटकनहारे की हम कथा सुनाते हैं
हम कथा सुनाते हैं ।
प्रभुसम भी जाननहारे की हम व्यथा सुनाते हैं
हम व्यथा सुनाते हैं ॥टेक॥

निज वस्तु से नाता तोड़ा, पर वस्तु से नाता जोड़ा ।
ज्ञानानन्द स्वभाव से चिगकर, मोहमें अटपट दौड़ा ।
अनुभूतिकी कली, कुमतिमें रली, विषयमें चली, घोर दुख पाया ।
सुनकर जिसकी कथा हृदय कप जाते हैं, हम व्यथा० । भव०॥१॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

चिर सहे निगोद किलेशा, फिर धरे विविध पशु भेषा।
सुर नर नरकन भटक भटक कर, हित न किया कहुं लेशा॥
अज्ञानका छला, चाहमें जला, कुगतिमें ढला होश नहिं पाया।
पाकर यह दुर्दशा विकल हो जाते हैं, हम व्यथा०। भव०॥२॥
योगी निज अन्तर्दृष्टी करी, भ्रान्ति सब हरी, विपत सब टरी,
शान्ति निज पाई····।
मोही ये मेरा मेरा करे, चाहमें मरे, भटकता फिरे, मोहमें भाई।
हम व्यथा सुनाते हैं। भव वन० ॥३॥
योगी आत्मयोगमें बढ़े, श्रेणिपर चढ़े, हुए अकलङ्क पूज्य
ऋषिराई····
मोही ये पर प्रसंगमें बढ़े, मोहपर अड़े, सने अघपङ्क मूढ
भवराई ···· ॥
क्या बिना ज्ञानके शान्ति हुई कहुं ज्ञानी, खुद सहजानन्द निधान,
कहाँ तू प्राणी, कहाँ तू प्राणी, कहाँ तू प्राणी।
भववनमें० हम कथा०। प्रभुसम०। हम व्यथा० ॥४॥

(१६६)

रसना क्यों न ज्ञानरस पीती, रसना क्यों न ज्ञानरस पीती।
षट् रस भोजन खा पीकर भी, रही रीती की रीती॥ रसना ॥टेक
वैरभाववश तरल तरंगनि, गोते खाये अमीती।
विषयरागवश मृदुता की पर, मिटा सकी नहिं भीती ॥रसना०१॥
अमित काल तो जन्मी भी न, जन्मी भी तो लीती।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

बाणी मिली तो विषयनि हारी, करी न प्रभु गुण प्रीति ।।रसना० २
ज्ञानामृतका परम सुफल है, सहजानन्द प्रतीती ।
विषयरमणका फल वह दुर्गति, जो अनादिसे बीती ।रसना ३।।

(१६७)

हूं तो प्रभु जैसा, हो गया बहुभेषा, संसारी ।
भूल बड़ी दुखदैन, प्रभु जी मेरी भूल मिटे ।।टेक।।
ध्यान तुम्हारा भक्त जनोंके, सारे संकट टाले ।
तृष्णा ममता आश हटाकर, आत्म स्वरूप उजाले ।
हूं तो प्रभु जैसा, अनुपम ज्ञानेशा, अविकारी ।
सत्य सहज सुख दैन, इसी में मेरी दृष्टि रहे ।।हूं०।।१।।
ज्ञानानन्द सुधारस पीके, कौन विषयविष पीवे ।
यह तो शुद्ध सनातन अपने, सहज ज्ञान से जीवे ।
हूं मैं परमेशा, शाश्वत धर्मेशा, हितकारी ।
अचल अमल गुणधाम, इसी में मेरी दृष्टि रहे । हूं तो० ।।२।।
जिन खोजा तिन पाया प्रभु को, प्रभु तो अन्दर था ही ।
निज सन्मुख होते हि आ गया सहजसिद्ध शिवराही ।
हूं मैं निर्दोषा, निरवधि गुणकोषा, स्वविहारी ।
सहजानन्दनिधान, इसी में मेरी दृष्टि रहे ।। हूं तो० ।।३।।

(१६८)

ज्ञान सुधारस पीजौ, प्रियतम ज्ञानसुधारस पीजों ।
चित्प्रकाशमें भासित वासित शाश्वत आनंद लीजो ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

प्रिय० चित्० । प्रियतम ज्ञान सुधारस पीजो ॥टेक॥
व्यर्थ अनर्थ दुरर्थ विषयविष विरस कुरस रसि क्यों अब खीजो ।
सहज सुखद अज सहज स्वरस निज, चित् भजि निज विश्राम गहीजो ।
प्रिय० । चित्० । प्रियतम ज्ञानसुधारस पीजो ॥१॥
स्वतः सिद्ध स्वाधीन सदाशिव, स्वसंवेद्य संवेदन कीजो ।
बोधि समाधि भावसंयम सजि, शान्ति सिद्धिका लाहो लीजो ।
प्रिय० । चित्० । प्रियतम ज्ञान सुधारस पीजो ॥२॥
त्रिविध कर्ममल दल मल गल कर, शुद्धि निरंजन आश्रय लीजो ।
सहजानन्द स्रोत शाश्वत शुचि, समयसार नित दर्शन कीजो ।
प्रिय० । चित्० । प्रियतम ज्ञान सुधारस पीजो ॥३॥

(१६६)

ज्ञानघन शाश्वत सहजानन्द, पड़ी क्यों विषय कषायनि फंद ॥टेक
गगन समान अलेप अमूरत, परभावोंसे सहज विदूरित ।
स्वयं सिद्ध परिपूर्ण सदोदित, लख निज ज्योति अमंद ।
पड़ा क्यों० । ज्ञानघन० । पड़ा क्यों० ॥१॥
सहज स्वभाव सहज अनुभव रस, मत हो विषयविकल्पोंके वश ।
उलट वमन कर विषय महाविष, छेद मोह विषकन्द ।
पड़ा क्यों० । ज्ञानघन० । पड़ा क्यों० ॥२॥
एक बार भी सत् पौरुष कर, सकल संसरणका संकट हर ।
सहज ज्ञानमय निज अनुभव कर, बन शाश्वत निर्द्वन्द ।
पड़ा क्यों० । ज्ञानघन० । पड़ा क्यों० ॥३॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

(१७०) आत्मरमण

मैं दर्शनज्ञानस्वरूपी हूं, मैं सहजानन्दस्वरूपी हूं ।टेक।।
हूं ज्ञानमात्र परभावशून्य, हूं सहजज्ञानघन स्वयंपूर्ण ।
हूं सत्य सहज आनन्दधाम, मैं सहजानन्दस्वरूपी हूं ।।१।।मैं०
हूं खुदका ही कर्ता भोक्ता, परमें मेरा कुछ काम नहीं ।
परका न प्रवेश न कार्य यहां । मैं सहजानन्द स्वरूपी हूं ।।२।।
आऊं उतरूं रम लूं निजमें, निजकी निजमें दुविधा ही क्या ।
निज अनुभव रससे सहज तृप्त, मैं सहजानन्दस्वरूपी हूं ।।३।।

(१७१) आत्मस्तवन

मेरे शाश्वत शरण, सत्य तारण तरण, ब्रह्म प्यारे ।
तेरी भक्ती में क्षण जांय सारे ।।टेक।।
ज्ञान से ज्ञान में ज्ञान ही हो, कल्पनाओंका इकदम विलय हो ।
भ्रान्तिका नाश हो, शान्तिका वास हो, ब्रह्म प्यारे, तेरी०।।१।।
सर्वगतियोंमें रह गतिसे न्यारे, सर्वभावोंमें रह उनसे न्यारे ।
सर्वगत आत्मगत, रत न नाहीं विरत, ब्रह्म प्यारे । तेरी० ।।२।।
सिद्धि जिनने भी अब तक है पाई, तेरा आश्रय ही उसमें सहाई ।
मेरे संकटहरण, ज्ञान दर्शन चरण, ब्रह्म प्यारे । तेरी० ।३।।
देह कर्मादि सब जगसे न्यारे, गुण व पर्ययके भेदोंसे पारे ।
नित्य अन्तः अचल, गुप्त ज्ञायक अमल, ब्रह्म प्यारे । तेरी०।।४।।
आपका आप ही प्रेय तू है, सर्व श्रेयोंमें नित श्रेय तू है ।
सहजानन्दी प्रभो, अंतर्यामी विभो, ब्रह्म प्यारे । तेरी०।।५।।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

(१७२) आत्मधुन

सच्चिदानंद हूं, ज्ञानानन्द । दर्शनानन्द हूं, सहजानन्द ।।टेक।।
चेतनामात्र हूं, हूं अखण्ड पिण्ड ।
हूं अनन्त शक्ति सत्य, रत्नका करण्ड ।।च्चिसदा०।।१।।
ध्रुव निरंजन अमल, ज्योतिका हूं पुञ्ज ।
निर्विकार निराकार, सदानन्दकुञ्ज ।।सच्चिदा०।।२।।
आप ही में आपसे आप ही निर्द्वन्द ।
शोक रोग राग द्वेष, कोई नहीं फन्द ।।सच्चिदा० ।।३।।
पूर्णमें ही पूर्णसे, पूर्णका प्रवाह ।
पूर्ण था पूर्ण रहेगा सदा अथाह ।। सच्चिदा० ।।४।।
ज्ञानमात्र ज्ञानपूर्ण, ज्ञानमय अभिन्न ।
हूं निरंग निस्तरंग, ज्योति हूं अखिन्न ।। सच्चिदा०।।५।।

(१७३)

तेरा है न कोई साथी, तज मिथ्या सरधान रे ।
माया की उलझन छोड़ो, खुदको ले पहिचान रे ।।टेक।।
जिनमें तू रमता फिरता, कोई न साथ होगा ।
ममता कर पाप बांधा, उसका फल पाना होगा ।।
इकले ही आये जाये, तज मिथ्या अरमान रे । माया० ।।१।।
जिस तनको आपा कहता, कुछ दिनमें खाक होगा ।
जिसको तू अपना कहता, इक दिन सब साफ होगा ।
तू है चैतन्य तेरा, कर सच्चा सरधान रे । माया० ।।२।।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

परको तू कर नहिं सकता, व्यर्थ हि तू खिन्न होता।
परको नहिं भोग सकता, भ्रममें क्यों खाय गोता।
खुदमें खुद तृप्त होकर, पा सहजानन्द रे। माया० ॥३॥

(१७४)

मेरा शरण समयसार, दूसरा न कोई।
जा प्रसाद कार्य समयसार सिद्धि होई ॥टेक॥

अविनाशी ब्रह्मरूप, अविचलन अज चित्स्वरूप।
शुद्ध बुद्ध स्वतःसिद्ध, जो प्रभु मैं सोई ॥१॥

प्रकटरूपका अधार, निश्चयतः निराधार।
ये ही गुरु ये ही शिष्य, भक्त प्रभू दोई ॥२॥

सहजानन्द सहज ज्ञान, निज परिणतिका निधान।
जिन चीन्हा उन परिणति, निर्विकल्प जोई ॥३॥

(१७५ से १८८) **संक्षिप्त कीर्तन धुन**

अर्हन् सिद्ध अर्हन् सिद्ध, सिद्ध सिद्ध अर्हन् अर्हन्।
अर्हन् भगवन् सिद्ध भगवन्, सिद्ध सिद्ध अर्हन् अर्हन् ॥
अर्हन् सिद्ध अर्हन् सिद्ध, अर्हन् भगवन् सिद्ध भगवन्।
अर्हन सिद्ध अर्हन् सिद्ध, अर्हन् भगवन् सिद्ध भगवन् ॥
अर्हन् सिद्ध अर्हन् सिद्ध, शिवपति केवलज्ञानी भगवन्।
सूरे पाठक साधो साधो, रत्नत्रयमय पूज्य महात्मन् ॥
अर्हन् सिद्ध अर्हन सिद्ध, सिद्ध सिद्ध अर्हन् अर्हन्।
सूरे देशक साधो जिनवर, अर्हन् सिद्ध सिद्ध अर्हन् ॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित शान्तिनिधान।
भगवद्वाणी हित अमलान, प्रतिबोधक गुरु कृपानिधान ॥
शिवेश जिनेश गणेश महेश, पूजत पाद नरेश सुरेश।
समयसार चैतन्य गणेश, ध्यावत पावें पद परमेश ॥
ॐ ॐ ॐ अर्हन्, ॐ ॐ ॐ। ॐ ॐ ॐ सिद्ध, ॐ ॐ ॐ ॥
ॐ ॐ ॐ मुनीन्द्र, ॐ ॐ ॐ। ॐ ॐ उपाध्याय, ॐ ॐ ॐ ॥
ॐ ॐ ॐ मुनिवर, ॐ ॐ ॐ। ॐ ॐ ॐ ब्रह्म, ॐ ॐ ॐ ॥
सच्चिदानंद ॐ सहजानन्द, निजानंद परमानंद सच्चिदानन्द ॥
सच्चिदानंद ॐ सहजानन्द, नित्यानंद परमानंद शाश्वतानंद ॥
शिवपति शंकर ब्रह्म गणेश, जगन्नाथ वज्रांग महेश।
विष्णु बुद्ध हरिहर सर्वेश, ईश्वर प्रभु विभु तुम्हीं जिनेश ॥
सन्मति वर्द्धमान अतिवीर, महावीर तीर्थंकर वीर।
त्रिशलानन्दन हर भवपीर, हो सन्मति पहुंचू भवतीर ॥
नित्यनिरंजन जय निर्नाम, संकटमोचन जय अभिराम ॥टेक॥
हे चेतन आनंदनिकेतन, रहो विराजो मम उपयोग।
शाश्वत सत्य तुम्हारी रुचिसों, मिटते जन्म जरादिक रोग ॥१॥
ॐ ॐ ॐ ॐ, ॐ ॐ ॐ। ॐ ॐ ॐ ॐ, ॐ ॐ ॐ ॥टेक॥
ॐ ॐ ॐ ॐ, ॐ ॐ ॐ। ॐ ॐ ॐ ॐ, ॐ ॐ ॐ ॐ।
ॐ ॐ ॐ ॐ, ॐ ॐ ॐ ॐ। ॐ ॐ ॐ ॐ, ॐ ॐ ॐ ॐ ॥
सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित शान्तिनिधान।
अविकल नित्य रहे निजभान, दो ऐसा अविचल वरदान ॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

ॐ भज ॐ भज, ॐ भज ॐ। ॐ भज ॐ भज, ॐ भज ॐ।
ॐ ॐ ॐ ॐ, ॐ ॐ ॐ। ॐ ॐ ॐ ॐ, ॐ ॐ ॐ ॥

(१८९) सहज परमात्मतत्त्वभक्ति

पाते सहज सुख आतमा, ऐसे निरत निज धाममें।
हो ज्ञानपरिणति एकवत्, अविचल सहज निजभावमें ॥
सर्व कर्म मल तन से रहित, इक स्रोत सब पर्यय गमा।
वह शुद्ध प्रभु चैतन्य हूं, कारण सहज परमातमा ॥१॥

शुद्धं चिदस्मि है मूर्ति जिसकी, ॐ या स्वीकारता।
निज मंत्र जप कर मूर्ति बिन, निजमंत्रमें जो वर्तता।
विपदा विकल्पोंका विलय, पाता जहाँ वह आतमा।
वह शुद्ध प्रभु चैतन्य हूं, कारण सहज परमातमा ॥२॥

सब अन्य द्रव्य विभावसे गत, स्वगुण रत्न करण्ड जो।
पूरण सनातन एक निरवधि, खण्ड बिन चित्पिण्ड जो।
सब कल्पनाओंसे जुदा, निक्षेप नय नहिं नहिं प्रमा।
वह शुद्ध प्रभु चैतन्य हूं, कारण सहज परमातमा ॥३॥

कर्ता न भोक्ता ज्योति उत्तम, स्वयं राजित गुप्त जो।
है ज्ञानिजन अनुभाव्य निष्कल, स्वरस निर्भर सत्त्व जो।
चिन्मात्र जिसका धाम नित्य, प्रकाशमय नियतातमा।
वह शुद्ध प्रभु चैतन्य हूं, कारण सहज परमातमा ॥४॥

अद्वैत ईश्वर समय विष्णु, व ब्रह्म अभिधावाच्य जो।
चित्पारिणामिक अरु परात्पर, भावनासे मेय जो ॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

जिसके सुदर्शन आश्रयोंसे अमल पर्यय बह थमा ।
वह शुद्ध प्रभु चैतन्य हूं, कारण सहज परमातमा ॥५॥
भूतार्थनय विपरीत आशयमें, कभी प्रतिभासता ।
गुणखंड नाना अंशमय, यद्यपि अखण्ड स्वभावतः ।
आनन्द दर्शन ज्ञानवीर्य, चरित्रमय सहजातमा ।
वह शुद्ध प्रभु चैतन्य हूं, कारण सहज परमातमा ॥६॥
जो शुद्ध अन्तस्तत्त्वके सुविलासकी निजभूमि है ।
निज नित्य लक्ष्मीप्रद निरंजन, निरावरण सुधाम है ॥
निर्भेद मग्न समस्त समस्त गुण, पर्यय जहाँ अचलातमा ।
वह शुद्ध प्रभु चैतन्य हूं, कारण सहज परमातमा ॥७॥
योगी कुशल ध्याते तथा, संकेतमें कहते जिसे ॥
होता समाधि सुभाव उत्तम रीति ध्यानेसे जिसे ॥
प्रभु मुक्ति मग जिसके उपासन, से हि पाता आतमा ।
बह शुद्ध प्रभु चैतन्य हूं, कारण सहज परमातमा ॥८॥
(ॐ शुद्धं चिदस्मि—इसकी बार बार भावना करना)

(१९०)

हमारा प्रभु निज आतमराम ॥ टेक ॥
प्रभु परिचय बिन, सुख जानन को, भ्रमत रहा हर ठाम ।
परमातम प्रभुसे पहिचाना, अन्तर आतमराम ॥१॥
सहजसिद्ध चैतन्य पिण्ड यह, अब जाना निजधाम ।
कीरति रूप गंध सपरस रस, शब्द भोग बे काम ॥२॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

परस रूप रस गंध शब्दकी रति इच्छा बेकाम ।
इनसे पृथक् स्वतंत्र अमर अज हूँ चेतन निष्काम ।।३।।
प्रभुता देखत विपदा भागे, मिले सत्य आराम ।
सहजानन्द मूल कारणपरमातम आतमराम ।।४।।

सहजपरमात्मतत्त्वाष्टकम्

।। शुद्धं चिदस्मि सहजं परमात्मतत्त्वम् ।।

यस्मिन् सुधाम्नि निरता गतभेदभावाः ।
प्रापुर्लभन्त अचलं सहजं सुशर्म ।।
एकस्वरूपममलं परिणाममूलं ।
शुद्धं चिदस्मि सहजं परमात्मतत्त्वम् ।।१।।

शुद्धं चिदस्मि जपतो निजमूलमंत्रम् ।
ॐ मूर्ति मूर्तिरहितं स्पृशतः स्वतंत्रम् ।।
यत्र प्रयान्ति विलयं विपदो विकल्पाः ।
शुद्धं चिदस्मि सहजं परमात्मतत्त्वम् ।।२।।

भिन्नं समस्तपरतः परभावतश्च ।
पूर्णं सनातनमनन्तमखण्डमेकम् ।।
निक्षेपमाननयसर्वविकल्पदूरम् ।
शुद्धं चिदस्मि परमात्मतत्त्वम् ।।३।।

ज्योतिः परं स्वरसकर्तृ न भोक्तृ गुप्तम् ।
ज्ञानिस्ववेद्यमकलं स्वरसाप्तसत्त्वम् ।।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

चिन्मात्रधाम नियतं सततप्रकाशम् ।
शुद्धं चिदस्मि सहजं परमात्मतत्त्वम् ॥४॥
अद्वैतब्रह्मसमयेश्वरविष्णुवाच्यम ।
चित्पारिणामिकपरात्परजल्पमेयम् ॥
यद्दृष्टिसंश्रयणजामलवृत्तितानम् ।
शुद्धं चिदस्मि सहजं परमात्मतत्त्वम ॥५॥
आभात्यखण्डमपि खण्डमनेकमंशम् ।
भूतार्थबोधविमुखव्यवहारदृष्ट्याम् ॥
आनंदशक्तिदृशिबोधचरित्रपिण्डम् ।
शुद्धं चिदस्मि सहजं परमात्मतत्त्वम् ॥६॥
शुद्धान्तरङ्गसुविलासविकासभूमि ।
नित्यं निरावरणमञ्जनमुक्तमीरम् ॥
निष्पीतविश्वनिजपर्ययशक्ति तेजः ।
शुद्धं चिदस्मि सहजं परमात्मतत्त्वम् ॥७॥
ध्यायन्ति योगकुशला निगदन्ति यद्धि ।
यद्ध्यानमुत्तमतया गदितः समाधिः ॥
यद्दर्शनात्प्रवहति प्रभुमोक्षमार्गः ।
शुद्धं चिदस्मि सहजं परमात्मतत्त्वम् ॥८॥

आर्या

सहजपरमात्मतत्त्वं स्वस्मिन्ननुभवति निर्विकल्पं यः ।
सहजानन्दसुवन्द्यं स्वभावमनुपर्ययं याति ॥९॥

Version 1